अज़ीम प्रेमजी

स्कूलों में अधिगम का माहौल

तपस्या साहा

> “संक्षेप में कहें तो माहौल इस प्रकार की हालातों से बने होते हैं जो किसी प्राणी की विशिष्ट गतिविधियों को या तो बढ़ावा देते हैं या रोकते हैं, या फिर प्रेरित या बाधित करते हैं!”
>
> - जॉन डेवी

अधिगम एक सतत यात्रा है। यह विचार उतना ही पुराना है जितना कि कन्फ्यूशियस (551-479 ईसापूर्व) जिसने यह महसूस किया कि जीवन में सफलता अधिगम से जुड़ी हुई है और जिसे बचपन से ही मन में बिठा देना चाहिए। बौद्ध धर्म में 'विनय' तथा इस्लाम धर्म में 'मदरसा' दोनों ही एक ऐसे भौतिक स्थान की बात करते हैं जहाँ धार्मिक एवं दार्शनिक चर्चाएँ की जा सकती हैं। प्लेटो की 'अकादमी' अथवा उनके सबसे अधिक प्रसिद्ध शिष्य अरस्तू की 'लाइसियम' शायद पहला स्कूल था जहाँ धनी व्यक्ति दर्शन एवं राजनीति पर चर्चा करने के लिए इकट्ठा होते थे और एक–दूसरे के विचारों से सीखते थे। समय के बीतने के साथ–साथ समाज को अलग तरह के कामगारों की जरूरत पड़ी।

हमने यह बात मान ली है कि एक संरचना के माध्यम से निर्धारित पाठ्यक्रम द्वारा व्यवस्थित ढंग से सीखना – समाज की यही माँग है; अतः स्कूल की एक आधुनिक प्रणाली अस्तित्व में आ गई है।

इतने वर्षों में इस प्रकार का शिक्षण–अधिगम काफी यांत्रिक बन गया है, और इसमें अंक प्राप्त करने पर बहुत जोर दिया गया है।

शोरापुर,कनार्टक में फाउण्डेशन की "बाल स्नेही स्कूल पहल" में स्कूलों का अवलोकन 214 संकेतकों पर किया गया जिनमें स्कूल का बुनियादी ढाँचा, कक्षा का वातावरण, शिक्षण–अधिगम प्रक्रियाएँ, शिक्षक क्षमता निर्माण एवं स्कूल में समुदाय की भागीदारी आदि शामिल थे। अब 60 संकेतक प्रयोग में लाए जा रहे हैं जो केवल शिक्षक की क्षमता–निर्माण और शिक्षण–अधिगम की प्रक्रिया की गुणवत्ता के क्षेत्र में हस्तक्षेप पर ध्यान केन्द्रित कर रहे हैं। इसलिए ये दो क्षेत्र हमारे लिए बहुत महत्त्वपूर्ण हैं।

इन दो क्षेत्रों पर ध्यान केन्द्रित करते समय हमें यह भी याद रखना चाहिए कि अधिगम तभी होता है जब हम प्रत्येक शिक्षार्थी की सुरक्षा, स्वास्थ्य, समानता एवं समावेशन को ध्यान में रखें। इनमें से प्रत्येक बिन्दु अधिगम के

गुणवत्तापूर्ण वातावरण के आवश्यक लक्षण को वर्णित करता है। सुगमीकरण के दौरान अगर हम इन चार सिद्धान्तों को प्रभावी ढंग से सम्बद्ध एवं संयुक्त कर पाएँ तो इससे अधिगम का जो वातावरण तैयार होगा वह स्थायी होगा।

शिक्षक जितना समझ सकते हों (मैं यहाँ नवनियुक्त शिक्षकों की बात कर रही हूँ जिनका शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया सम्बन्धित वह ज्ञान सीमित होता है जिसकी चर्चा यहाँ की जा रही है), उसके अनुरूप इन विचारों को ध्यान में रखते हुए, और साथ ही जितना व्यावहारिक रूप से सम्भव हो उसे समझते हुए; हमने "अज़ीम प्रेमजी स्कूलों" की स्थापना करने का बीड़ा उठाया है।

इस प्रकार अपने "गुणवत्तापूर्ण अधिगम" के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए हमने अपने चारों ओर नजर डाली कि आखिर इस "गुणवत्तापूर्ण अधिगम" को पाने के लिए किन चीजों की आवश्यकता है। क्या यह बुनियादी ढाँचा है, कक्षा में बैठने की व्यवस्था है, पौष्टिक मध्यान्ह भोजन है, बच्चों के साथ सख्ती से पेश आना है, उन्हें हमेशा अनुशासित करते रहना है, उन्हें लम्बे–लम्बे गृहकार्य देना है, बार–बार टेस्ट और परीक्षाएँ लेना है या दण्ड देना है? यह तो एक लम्बी सूची है। इन्हीं सब बातों का अनुभव तो बड़े होते समय हममें से अधिकांश लोगों ने किया था। हम

समझ गए कि भौतिक एवं मनो–सामाजिक वातावरण दोनों का अनुकूल होना जरूरी है।

मनो–सामाजिक वातावरण

हमने अपने स्कूलों में इनमें से प्रत्येक क्षेत्र का ध्यान रखने की कोशिश की है। स्कूल के आरम्भ होने से पहले ही हमने समुदाय के बच्चों को अपने साथ स्कूल परिसर में समय बिताने का आमन्त्रण दिया।

सिरोही, रुद्रपुर तथा टोंक के स्कूलों में भर्ती बच्चों को हमने अधिगम के विभिन्न स्तरों पर पाया; शिक्षकों ने हर बच्चे की हर जरूरत का पता लगाया और अपनी पाठ योजना बनाई। यह केवल बच्चे के संज्ञानात्मक स्तर ही नहीं बल्कि उसकी नियमितता की भी बात है। सिरोही में कुछ बच्चे अपने भाई–बहनों के साथ आए, एक तो कुछ दिनों तक अपनी दादी या अपनी माँ के साथ आया। सिरोही में हमारी एक शिक्षिका प्रतिदिन अपनी डेढ़ साल की बेटी के साथ आती थीं। लेकिन स्कूल की दिनचर्या में कभी बाधा उत्पन्न नहीं हुई; सारे स्टाफ ने माँ तथा बच्ची के साथ सहयोग किया।

शुरू–शुरू में कई बार बच्चे रसोई में झाँकते और बिस्कुट खाने की इच्छा व्यक्त करते; शुरू के कुछ महीनों में हमने इस बात का ध्यान भी रखा। कभी–कभी किसी विद्यार्थी को सिर्फ अपने खेलने के लिए एक गेंद मिल जाती तो वह पूरे दिन उसके साथ खेलता रहता और कक्षा से बाहर रहता। शिक्षक भी अत्यन्त धैर्य व प्यार के साथ उसे यह अवसर देते। लेकिन जल्द ही वह यह आदत छोड़ देता और अपने आप

कक्षा में आ बैठता। इस तरह की घटनाएँ शिक्षक की उपलब्धियाँ थीं जो उन्हें सतत प्रेरणा देती रहतीं।

भौतिक वातावरण

सारे अज़ीम प्रेमजी स्कूल किराए के भवनों में शुरू हुए, जो स्कूल के हिसाब से नहीं बनाए गए हैं, अतः सारी कक्षाएँ हवादार या प्रकाशवान नहीं हैं। सभी स्कूलों में खेल का मैदान भी नहीं है।

स्कूलों में फर्नीचर भी कम हैं। जगह का बेहतर उपयोग करने के लिए जमीन पर दरियाँ बिछाकर बैठने की व्यवस्था की गई है। हमने बच्चों के उपयोग के लिए कम ऊँचाई वाली मेजें रखी हैं। हर कक्षा में बच्चों के काम को प्रदर्शित करने के लिए डोरियाँ बँधी हुई हैं और उनकी किताबें रखने के लिए एक शेल्फ है। कक्षा में शिक्षक ने कुछ चार्ट्स और पोस्टर प्रदर्शित किए हैं।

भौतिक वातावरण पर कम जोर देने के तीन कारण हैं। एक, ये किराए के भवन हैं; दो, स्कूल को एकदम अलग–सा नहीं दिखना चाहिए। बच्चों को लगना चाहिए कि स्कूल उनके समुदाय का ही विस्तार है।

अज़ीम प्रेमजी स्कूल में हमने मौजूदा भवन का बहुत बेहतर उपयोग किया और कम से कम भौतिक परिवर्तन किए। कक्षाएँ साफ–सुथरी थीं और भोजन अच्छा था, लेकिन सबसे बड़ी बात यह थी कि हर बच्चे और हर शिक्षक के बीच विश्वास व सम्मान और स्वतन्त्रता व समझ का रिश्ता स्थापित हुआ। जिन बच्चों ने सिरोही के अज़ीम प्रेमजी स्कूल में दाखिला लिया वे पहली बार स्कूल आ रहे थे और कुछ ने पढ़ाई बीच में छोड़ दी थी; कुछ बच्चों में तो कक्षा में 15 मिनट के लिए बैठने तक का धैर्य नहीं था। शुरुआत में तो बच्चे ही यह निर्णय ले लेते थे कि उन्हें कब और किस कक्षा में बैठना है। करीब डेढ़ महीने बाद हमने पाया कि वही बच्चे उन कक्षाओं में बैठना चाहते थे जहाँ उन्हें वास्तव में बैठना चाहिए था।

मुझे ऐसा लगा कि उनके लिए अभद्र भाषा का प्रयोग करना, मारपीट करना, लात मारना आदि प्रतिशोध लेने वाली बात नहीं थी वरन उन्हें इसमें आनन्द आता था। चर्चा करने पर यह बात साफ हुई कि बच्चे यही सब अपने घर में और आसपास देखा करते थे; अतः उनका लड़ना–झगड़ना, अपशब्द बोलना और दूसरों के प्रति असंवेदनशीलता दिखाना मानो समय बिताने और आनन्द

प्राप्त करने का एक जरिया था। इस तरह की घटनाएँ बार–बार होती थीं और बच्चे शिकायत करने के लिए दौड़े चले आते; पर जब भी वे हमारे पास आते तब हम उनके

साथ बहुत कोमलता से पेश आते, यह कभी नहीं पूछते कि ऐसा क्यों हुआ या क्यों किया, बल्कि उनमें फिर से दोस्ती करा देते और उन्हें अलग प्रकार के खेलों में लगा देते। ज्यादा तो कुछ नहीं बदला है लेकिन उनकी उग्रता, रवैये और बारम्बारता में निश्चित रूप से कमी आई है। पहले वे जो कुछ करते थे उसकी तुलना में अब वे अन्य खेलों में अधिक रुचि दिखाते हैं।

बच्चों को कभी डर या धमकी का सामना नहीं करना पड़ा, उल्टे उन्होंने महसूस किया कि उन्हें बिना किसी शर्त के स्वीकार कर लिया गया है, यदि उन्हें किसी चीज में रुचि न हो तो उसे सीखने का बोझ उन पर नहीं डाला गया और न ही गृहकार्य सम्बन्धी कोई भार उन पर था। सार्थक गतिविधियों, समूह व जोड़ी बनाकर किए जाने वाले कार्यों के माध्यम से पढ़ाने पर जोर दिया गया। प्रत्येक बच्चे ने अपनी गति से सीखा और सत्र के अन्त में उसका गुणवत्तापूर्ण आकलन किया गया। शिक्षक बच्चों के स्तर की जाँच करते रहते हैं और उसके अनुसार अपने शिक्षण की प्रक्रिया को नया रूप देते हैं।

एक बार रुद्रपुर के अज़ीम प्रेमजी स्कूल के एक भ्रमित अभिभावक ने मुझसे पूछा कि यह स्कूल क्या करने की कोशिश कर रहा है क्योंकि उन्हें स्कूल की प्रक्रियाएँ अपनी समझ से परे लग रही थीं। मैंने उनसे बस इतना ही पूछा कि क्या उनका बच्चा नियमित रूप से स्कूल आता है क्योंकि उस समय मेरे पास उनसे बातचीत करने का पर्याप्त समय नहीं था। वे खुलकर मुस्कुराए और बोले," हाँ, हाँ, मेरा बेटा तो एक दिन के लिए भी स्कूल से अनुपस्थित नहीं होता।"

तपस्या साहा अज़ीम प्रेमजी फाउण्डेशन की स्कूल कोर टीम के साथ जुड़ी हुई हैं। उन्हें हाई स्कूल की कक्षाओं में लगभग चौदह वर्षों तक भूगोल शिक्षण का अनुभव है। उनसे tapasya@azimpremjifoundation.org पर सम्पर्क किया जा सकता है। **अनुवाद** : नलिनी रावल